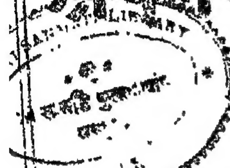
श्रीगणेशायनमः

अथ भरतरी सतक भाषा लिख्यते



जाको मेरे चाहै है मासा विरक्त सन ॥ और पुरुष सों सो
न पुर वह चहत और धन ॥ मेरे मन कन परवीन
हो कोउ इक और हि ॥ यह विचित्र गात दोष चित्र ज्यों
तज धन डोरहिं सब भांति राज पति भी सुख काज पुर
ष को परम धिक ॥ धिम काम याहि धिक मोहि धिक
ब्रज निधि कोसन इक ॥ १ ॥ दोहा ॥ पुरुष की सुद्
धि भाइये अति सुजन पंडित लोग ॥ अल्प द्रव्य अभागोव
को बिधि हु नार बिवन जोग ॥ २ ॥ छपे निकसत दाढ़
ते सा जतन कर काढ़त कोऊ ॥ मृग तृष्णा को नीर पीवे
प्यासे सो कोऊ ॥ लहत सुधा को खुआ साह मरन में ॥
मणि काढ़त ॥ होन जलधि के पार लहरि वाकी जब बाढ़
त ॥ रिस भरे सर्प को पहुप ज्यों अपने सिर पर धर लत
त ॥ ३ ॥ कुंडलिया ॥ फीको है शशि दिवस में का
मिन जोबन हीन ॥ सुन्दर मुख अक्षर बिना सर बर पं
कज छीन ॥ सर बर पंकज छीन होत प्रभु लाभी धनको
सज्जन कापटी होत न्रपति डिगवास खलन को ॥ ऐसा
तो ही सरस्य मर्म छेदन आजो को ॥ ब्रज निधि इन कों
देखि होत मेरो मन फीको ॥ ४ ॥ छूटो है का की सौ मरि

चर सारा चढ़ो सु॥ बीर अंग कठि शस्त्र सुं सोभा सरस बढ़ी सु अंग गज मद कर छौनहि॥ द्विज कला शशि सो भि सरद सरताज मही नहि॥ सुरत दलमलीन। रत्न हज सुंदरि ता मोटी आर्थिन को धन देत सौ घटी नाहि न छोरी॥५॥ दोहा॥ जाको जब मुष्टी नहीं होत बहुन्त पति राज॥ छोटे मोटे होत सब सोच गर्भ नहि का ज॥ छप्पै॥ सब ग्रंथन का ज्ञान मधुर बानी जिन के मुख॥ नित प्रति विद्या देत गजस को पूर रह्यौ सुख॥ ऐसे कवि जह बस्त रहत निरधन ता को अति॥ राजा नाहिं अधीन भई याही तें यह गति॥ यह बिवेकसंपति सहत सब पुरुषन में अति ही बर॥ पठकिया रतन को मोल जिन बजो हौरी कूर नर॥७॥ दोहा॥ बिपता और संपति सभा सभा माहिं सुन बैन॥ नृप बिक्रमज न रति कथा वे नर बर गुन ऐन॥८॥ छप्पै॥ नीत निपुन नर धीर बीर कछु सुजस करौ किन॥ अथवा निंदा कीर कहौ दूर बचन छिन छिन॥ संपति हू चलि जाउ रहौ अथवा आगिनत धन॥ अबही मृत्यु किन होउ होउ अथवा निश्चलतन॥ पर न्याय पंथ को तजत नहिं बुधि बिबेक गुन ज्ञान निधि॥ यह संग साहक रहत नित देत लोक प र लोक सिधि॥ ९॥ कुंडलिया॥ पंडित पर आधीन को नहि करिये अपमान॥ तृण सम संपति को गिने बस नहिं होत सुजान॥ बस नहिं होत सुजान न पद्म भर गज है जैसे॥ कमल नाल के तंतु बधे रुकि रहि है कैसे॥ तैसे इनको जान सबहि सुख साचा मंडित॥ आदर सों ब स होत मस्त हाथी जों पंडित॥१०॥ छप्पै॥ चोर सकत नहि

चोर भारे निस पुस्ट करत ॥ अथिन हूं कों देत छिन छिन में अगनित कबहू बिन सत नाहि लसत बिया सुगुम धन जिन के यह सब साज सदां तिन कों प्रसन्नमन ॥ राधा धिराज छित छत्र पति यद् यैतो अधिकार लहि ॥ उनकों निहार हग फेर बो यह तुम कों उचित नहि ॥ ११ ॥ कुंडलिया ॥ मांगे नाहि न दुष्टतें लेत मित्र कों नाहि ॥ प्रीत निवाहन दुःख में न्याव वृत्ति मन मांहि ॥ न्याय वृति मन मांहि उचू पद प्यारो तिनकों ॥ मानन हू के जात अकल भावै नहिं तिनकों ॥ खड़ग धार व्रतधारी रहे क्योंहूं नहिं त्यागे ॥ संतन कों यह मंत्र दिये कोने बिनमांगे ॥ १२ ॥ नाहर भूखो उदर रहू बैस तन छीन ॥ सिथल सुन्न अति कष्ट सों चाल बेहू में लीन ॥ चालिबे हू में लीन तऊ साहस नहिं छोडे ॥ मद गज कुम्भ बिदार मास भक्षन मन मांडे ॥ खगपति भाखो घास पुरानी खात न जाहर ॥ अभिमानन में मनुष्य सिरोमन साहत नाहर ॥ १३ ॥ दोहा ॥ अम्टत भरे तन सन बचन निस दिन पर तु गुन मानत पेरु सम बिरले संत सन्सार ॥ १४ ॥ ईश्वर अरु राक्षस रहत भरवत बडवा तुल्य ॥ सिंधु गभीर सु अति बडो राखत सुखसे कुल्य ॥ भूमि सयन कहु पलक पै साक हार कहु मिष्ट ॥ कह हु कथा सिर पांव कह अर्था सुख दुख इष्ट ॥ १६ ॥ छप्पै ॥ बडी भूमि बिस्तार सिंधु सीमा कर राखी ॥ सिंधु चार सौ कोस अवधि येतो कछु भारवी ॥ बहुत बडो आकाश ताहि रवि अति दिन नापत ॥ रवि हू को रथ राय आप अपने बल कांपत ॥ सबकी स्टजाद देखी सुनी जदपि बडाई हु लहत ॥ सब एक बुद्धि बिस्तार बिधि साध रूप सामार हित ॥ १७

दोहा ॥ बंदन सबही सुरन को बिधि हू को दंडौत ॥ क
र्मन को फल देत हैं इन को कहा उदोत ॥ लाभ संतोष
दूरि के ऐसे कंचन मेरु ॥ याकी महिमा याहि में बिधि
रचियो कहरि हेर ॥ १९ छपै ॥ कुछित मंत्री भूप
संत बिन संत कुसंगतें ॥ लाड़ लड़ाये पूत पोत कन्या कु
ढंगतें ॥ बिन बिध्या ते बिप्र साल खल संग किये तें ॥ हो
त प्रीति को नाश बास पर देश करें ते ॥ बनिता बिना म
द हास से खेती बिन देखी दुमन ॥ सुख जात अनुप अनु
राग तें अति अप्रमाद सें जात धन ॥ २० ॥ लज्जा जुत जो
होय ताहि मूरख ठेरावत ॥ धर्म ब्रति मन मांहि ताहिदं
भी ठेरावत ॥ अति पबित्र जो होय ताहि कपटी कहि
बोलत ॥ रखत सुरता अंग ताहि पापी कहि बोलत ॥
बिक्रमीत मत प्रिय बचन एक तेज वान लंपट कहत ॥
पंडित लबार कह दुष्ट जन गुन को तजे औगुन गहत ॥
जात रसातल जाहु जाहु गुन ताहू के तर ॥ परो सिला पर
सील अगिन में जरो सुपरिकर ॥ सूरातन के सीस बज्र
बेरिन के बरमहु ॥ एक द्रव्य बहु भांति रैन दिन धन ज्यों
सरज्ञाहु ॥ जा बिन सब गुणा तिरह सन कछु कारि जन्नहि
करि सकहिं ॥ कंचन आधान सुव साज सब बिन कंच
जग अकवकहि ॥ २२ ॥ जैसे काहू सांप को छबरे पकरि
ध खोसु ॥ नन मांही मेल्यो सुबहु दें सिर पट पर्योसु ॥ दे
सिर फूटि पर्यो सुभ पंडित अति केदी ॥ इन्द्री बिह बल
भूख पिटारी मुह से केदी ॥ रे तू मन थिर राखिके प्रभु
ऐसी जो है ॥ २३ ॥ दोहा ॥ कर की मारी गेंद ज्यों सांहि
भूमि उठि आत ॥ सत पुरुषन की बिपति त्यों छिनहि

में लिपिजात ॥ २४ ॥
जैसे किंदुक गिर उठै ज्यों नर करछिन दुख ॥ पापी दुख सों उठत नहीं रत पिंड ज्यों सुख ॥ २५ ॥ पुन चरित्र तिय हित करत दुखदुख मित्र मसान ॥ मन रंजन तीनों मिलें पूरब पुन्नहि जान ॥ २६ ॥ सोरठा ॥ सत पुरुषन की रीति संपति में कोमल हि मन ॥ दुखहीं में यह रीति वज्र समान होय मन ॥ २७ ॥ विद्या जुत हु होय तऊ छांडि तजि दीजिये ॥ सर्प जु मणिधर होय भय कारी कहा कीजिये ॥ ॥ कुंडलियां ॥ पानी पय सों मिलत ही जान्यो अपनो मित्त ॥ आप सबै फीको बहु जब कियो सुचित्त ॥ जल को कियो सुचित्त तपत जब पय को जानी ॥ तब अपनो तन वार मीतभव मन में आनी ॥ उफान चल्यो मधि अग्नि मित्र खात जल छिरकत पानी ॥ सत पुरुषन की प्रीति रीति ज्यों पय और पानी ॥ २८ ॥
छप्पै ॥ कहत साधु कूं दुष्ट मूढ़ पंडित ठहरावत ॥ करत मित्र को शत्रु अछतातो विष करि गावत ॥ नृपति सभा को नाम चक्र का देवी कहिये ॥ ताकी सेवा किये सकल सुख सेवा लहिये ॥ यह जो मल को है है नहीं तो गुण विद्या सब अफल ॥ सुन बात चतुर नर तू यही वासों है है सफल ॥ ३० ॥
कुंडलियां ॥ कूकर सिर की राख पे गिरत बदन तें लार ॥ खरी बास विकाल तन खुरो हाल बेसार ॥ खुरो हाल बेसार हाड जसके को चावत ॥ सुरपति हू की संक नेक हू नाहिन लावत ॥ निडर महा भय नाहि-

देख घुर रावत हुकर ॥ तैसोही नर नीच निलज्ज्यों डोलत कूर ॥ ३१॥ कूकर सूके हाड़सों मानत है मन मोद ॥ सिंह चलावत हाथनहिं गीदर आये गोद ॥ गीदर आये गोद आंखि हू नांहि उघारे ॥ महामत्त गज देखि दौरिके कुम्भ विदारे ॥ तैसे ही नर बड़े बड़ो सूत करत दुहूकर ॥ कौ नोचता नीच कूर ज्यों कुछित कूकर ॥ ३२ ॥ दोहा ॥ पापनिरावत हित करत गुन गावैं आगिन ढांकि ॥ दुख में रखत देत कछु सत मित्र लच्छ आंक ॥ ३३ ॥ आहि जल मृगके सुरत। सज्जन हित कर जीव ॥ लब्धुक धीवर दुष्ट जन बिन कारन दुख कीव ॥ ३४ ॥ सोरठा ॥ जब बूंद ह्वै पीन कमल पत्र जैसी रहैं ॥ मुक्तासी यह कौन लाभ मान अपमान हूं ॥ ३५ ॥ कामल डालें सोथ कोध कीये विधि हंस पै ॥ पय पानी संग होय जुदा करै नहिं ॥

॥ ३६ ॥ विघ्नकर विधि हर दसहू संकट छिनकर नीक ॥ खलन भया नल कारन लख करत आनाभ जुठीक ॥ ३७ मधु पगुछा सिर पर रहै के सूखे बन मांहि ॥ मनहार सत पुरुष रहै कष दुष घर मांहि ॥ ३८ ॥ गुप जुप गोला अरु बचन निपट हाट नड़ढार ॥ खमा दान परिहास लसवा कथादि दूर ॥ छप्पै ॥ नीचे ह्वै के चलत होत सबते ऊंचे अति ॥ परगुन कीरत करत आप गुन ढांकत बहु भांति ॥ आतम अर्थ बिचार करत निश दिन परमारथ ॥ दुष्ट दूर बचन सहत छिमा कर साधत स्वारथ ॥ नितर हृत जे कुसम बनसों बचैन कोप कर कहत ॥ ऐसे जस संत या जगत में पूजा वह सब के सुलह ॥ भयो सोल

मन मांहि कहत ये औगुन चाहिये ॥ निंदा सबकी कर
त महां सब पानिकल हीये सत्य वचन कहा तप्य सु
ची मन तीरथ जानहु ॥ हाथ सजनता जहां तहां गुन
प्रघट बखानहु ॥ जस जहां कहा भूषन चहत सब बि
द्या जहां धन कहां ॥ अप जसहि छयो या जगत में ति
न्ह मृत्यु या है महां ॥ ४१ ॥
टांटि उघारे मूंढ वाहू सिर पर नांही ॥ तप्यौ जेठ को धाम
बील की पकरी छांही ॥ तहां बीलफल एकसी सपें परसौ
सुवा के ॥ मानों बज्र प्रहार इन्द्रनें कियो सुजाके ॥ सरव
ठौर जानें बिरम्यौ सुवह हाय दूतते दुख को सहत ॥ निर
भाग पुरपजित जाय तित बेर बिपता अगनित लहत ॥
कुंडलिया ॥ मंडन है अस्व को सजन तासन मान ॥
बानी मंडन सूरता मंडन धन को दान ॥ मंडन धनको
दान ज्ञान इन्द्री मंडन दम ॥ तप मंडन अक्राधि बिनय
मंडन साहृत सम ॥ प्रभुता मंडन माफ धम मनंडनछ
ल छूंडन ॥ सबहिन में सिरदार शीलयह सबको मंडन
॥ ५४ ॥ उत्तम नर पर अर्थ करत स्वारथ को त्यागत ॥
मध्यम नर पर काज करत स्वारथ अनुरागत ॥ दुष्ट-
जान निज काज करत नर काज बिगारत ॥ वह नहिजा
ने कौन रूप चौथो जे धारन ॥ निज कौन होन निजका
ज कछु आरके न्वारथ हरन ॥ जिन कौन होत निदरसे
छिन देह प्रभु कस सुत नहा बिन डरत ॥ दोहा ॥
जाने पर के गुन बसे बे महत पुरुष को संग ॥ वि
द्या अपनी भार्या तिन में मनका रंग ॥ तिन में मनको
रंग भक्ति शिव की दृढ़ राखे ॥ परजबती को त्यागबचन

झूठे नहिं भाषे ॥ गुरु आज्ञा में नम्र रहै दुष्टन संगा॥ हृद्य ज्ञान मन माहि दमन इन्द्री सुख मानें ॥ खाकबाद की संग पुरुख तें न्टप सम जानें ॥ ४७॥ छप्पै ॥ जों दरपन प्रतिबिंब हाथ में आवत नाहीं ॥ त्यों नारीन के हृदय कठिन अपार और मांहीं ॥ दुर्गम गिर सम चपल हित चित गति सोऊ॥ सबनारि नाल इनकों कहत बिस कुर की बेली यह ॥ नियदोस दोषम दोष एकहा कहौ अति कौअगह ॥ ४८॥ तृष्णा कों तजि देहु राम को भजन करो नित ॥ दया हिया में राखि पापको दूरि राखि नित॥ सत्य बचन सुख बोल सार पदवी जिय धारहु॥ सत पुरुषन की सेब नम्रता श्रुति बिस्तारहु॥ सब गुन अपने गुप्त करि करति परि पालन करहु ॥ कर दया दुखी नर देखि कें संतरीति यह अनसरहु ॥ ४६ ॥ भयो सु कम्पित गात दंतहु उखरि परे महि॥ आये दीखत नाहि बदन ते लार परत ढह ॥ भई चाल बेचाल हाल बेहाल भयो अति॥ बचन न मानत बंध नारि हू तजी श्री न गति ॥ यह कछु नहीं दिये वृध पन कछु मुख सों नहिं कह सकत॥ निज पुत्र अनादर कहत यह बूढ़ो यों हीं कहत ॥ ५०॥ हाड़ देखिकें तजत तियज्यों काली को कूप॥ त्योंही धोरे बारि लखि बुरो लगत नर रूप ॥ ५१॥ कारज आछो अरु बुरो कीजे अकुत बिचार॥ कीये जलद नाहीं बनें रहत हिये में हार ॥ ५२॥ छप्पै ॥ चीरलसन पा मांहि तिसनकी खल को राधत॥ आक रुई के हेतु खेतके चन्द हलसाधत॥ कोदं निजपन काज खात धन सार हि डारत॥ तैसें ही नर देह पाप बिषया बिष तारत ॥ यह

कर्म भूमि को पाय कें जे नहिं जपतप व्रत करहिं ॥ तब मूढ़ महा नर जगत में पाय पोट सिर पर धरहिं ॥ ५३ ॥ दोहा ॥ बन रणाज और अगिन में गिरि समुद्र के मध्य ॥ निंद्रा पद ठौरहिं कठिन पूरब पुन्यहिं सिद्ध ॥ ५४ ॥ शिव विश्नू रूप जोगेश्वर मुफा भायी लेव ॥ बंदन पद इन्हें अच्छत धर्म भाग को सेव ॥ ५५ ॥ बूड़ि समुद्र अरु मेरु चढ़ि शत्रु जीत व्योहार ॥ विद्या खेती चाकरी पग लिख भावी सार ॥ ५६ ॥

कुंडलिया

हिमगिर सिर धन के कहत कहा कौं मैनाक ॥ सहिवो हों निज सीस पर बूंद बंज परवाक ॥ बूंद वंज पर वाक अगिन ज्वाला में जरिवो ॥ नीको होय सब भांति वहां सन्मुख ह्वै मरिवौ ॥ डरो सिंधु के मांहि कहां लों ह्वै है थिर ॥ निलज लजायो मोहि पितामह जान्यो हिमगिर ॥ ५७ ॥

छप्पै

सुरगुर सेनाधीस सुरन की सेना जाके ॥ सस्त्र हाथ लिये बज्र हढ़ता सों ॥ ऐरापति असवार प्रभु को परम अनुग्रह ॥ ऐसी संपति सो जु सदां सेहत सुइन्द्रय ॥ सो जुद्ध मांहि दानवन सों होत पराजय ॥ खोय पति समाज समान सबही वृथा सब सों अद्भुत दैवगति ॥ ५८ ॥

दोहा ॥ दान भोग और नास तो धन अन धन में जात है ॥ करत सोय की त्रास बास नास को तीसरो ॥

(छप्पै)

महा अमोलिक रत्न नाहिं सुरीझत तिन कों ॥
जिन की निर्मल बुद्धि एक अति ही अस्टत सों ॥

तैसे ही नर धीर काज निश्चै करि मतिही॥ सब दोष हित और गुन कहन ऐसो कारज मन धरत॥ ताको जु अर्थ अ म्टत लहत कोऊ दुष्ट को नाहि करत॥ ६३॥

कुंडलीया

राज बिसे और दिवस कों रबि सम तेज निधान॥ यासों नह इन सम नहीं ताते तजे निदान॥ तातें तजे निदान आन इनहीं सों अरकत॥ भयो सीस को सह चाह कर जपतप करत॥ ऐसेही नर धीर मरत हू करत सु जाका॥ गिरत परत रन मांहिं सुभट पहुंन्चत जहां रा जा॥ ६४॥

कुंडलिया

कंकन तें सोहत न कर कुंडल तें नहिं कान॥ चन्दन तें सोहत न सिर जान लेहु परजान॥ जान लेउ यह जान दान तें पान लसत है॥ कथाश्रवन तें कान सरम शोभा सरसत है॥ परमारथ सों देह दिपत चंदन सों तंकन॥ यह सकृत सबरे खिप हरिये कुंडिल कों कंकन॥ ६५॥ दोहा॥ सोही पंडित सोई शिक्षत सो गुणज्ञ कुल वान॥ जाके धन सोई सुघर सुन्दर सूर सुजान॥ ६६॥ भाल लख्यो बिधना सुबह घटै बंधे कछु नांहि॥ सुर धर कंचन मेरु जस मंद कूप घट मांहिं॥ धेनु धरा कों चहत पय प्रजा बच्छ करि मान॥ याकों परि पालन कीये कल्प वृक्ष समजान॥ ७०॥

छप्पै

सांची है सब भानि सदा सब बात न झूंठी॥ कबहूं रोस में भरी कबहू प्रियबचन अनूठी॥ हिंसाकाडर नाहि दया हू प्रगट दिखावत॥ धनलेबे की बान खर्चे हू

धन को भामत ॥ रारवत जु मीर बहु नरन की सदां संवा
रत ॥ रहत बहु भांत रूप नानारखत ॥ ७१॥

दोहा

जो अति क्रोधी भूपति काहू सोन कृपाल॥ होमकरत
हू दुरजन्यो हतो अगिन कीज्वाल॥ ७२ ॥ दयाहीन
बिन काज रि उत्तर करता पर पुष्ट ॥ सहि न सकत सु
खबंध को यह स्वभाव सो दुष्ट ॥ ७३ ॥ बिधि बिपति
हरन बरन करत धीरजहिं दूर ॥ दूर होत धीरज तजो
गलाध सिंधु गिर पूर ॥ ७४ ॥ तिय काढा छिसर कतत
छिरत ढहत को पहीं अंग ॥ लाभ पास खेंचितन मन व
हू बिरले हैं जागि॥ ७५॥

छप्पै

दयां जनावत मांहि घर गये करत सुआदर हित करा॥
साधन मात कहत उपगार वचन वर ॥ काहू कूं दुख
होत कथा बहु कबहूं न भाखत ॥ सदां दान सों मीति मन
तजूं संपति राखत ॥ यह खड्ग धारि ढल धारि के जेनहिं
धरत बिकार मन ॥ तीन कोस इहां लोक दुहू में छाय
रहो जसही रचना ॥ ७६॥ दोहा ॥ पत्र छीन पल्लवतरू
छीन छंद बढ़िवार ॥ सत पुरखन को बिपति छिन संपत
सदां अपार॥ ७७॥ धीरज गुण डाको चहे ताहि ढक ज्या
न काहू ढाल॥ जैसा नौनो आरवि रूख रुची निकसत
ज्वाल ॥७८॥ नस्ट होय फल भारतफ जलभरन घटा सु॥
त्यों संपति कर सतपुरुष न बे स्वभाव फरास॥ ७९॥
असमपि नदन दरिद्रता मीत बच्चन धन पूर॥ निजात
फल निदार हत वह सलसे सूर॥ ८०॥ ग्राशि कसुर

नि प्रफुलित करत कमल ॥ बिकसत भान बिन मांगध्न ॥ देत जल त्यों ही सत सुजान ॥ ८२॥ बड़े साम् सी होय सो काज करत भुकि भूमि ॥ सूर बीर और सूर यह लेखजात रन भूमि ॥ ८३॥ गिरतें गिर जबो भलो पकरिबो नारि वो नाग ॥ अगिन होत जल रूप सिंध डावर पद पावत ॥ होत सुमेर हु सेर सिंह हू स्यार कहावत ॥ पहोप माल सम व्याल होत बिष हू सम अ-म्रत॥ वह नगर समान होत सब भांति अनोपम ॥ सब शत्रु आप पायन परत मित्र हू करत प्रसन्न चित्त ॥ तिनके सुपुन्य प्राचीन सुभ तिनके मंगल मोद नित ॥ ॥ ८४॥ दोहा॥ पवन बान सब अमनन सुनि सहत कौन रिभत्याग ॥ ८५॥

छप्पे

चाकर हू दस बीस नाहिं जो आज्ञा राखत ॥ जातगोत के लोग कब हूं भाजा नाहिं जो चाखत॥ अपनो निजप रिवार नाहि बेद प्रसन्न मन ॥ बिप्रन ही दान देन को मिलत नाहि धन ॥ कछु करन सकत हित मित्र को रंग राग अरु नित्यगत॥ ८६॥ बाल ततु सों बांधि व्याल बस करन उमाहत॥ सरस होप के तार बज्र को भेद्यो चाहत ॥ डारि सहत की बूंद समुद्र को पार मिटावत ॥ तैसे ही हि बन् खलन के मन हिं रिझावत॥ वह नीच अपने पोत जत नाहिं ज्यों भुजवा त्यों दुष्ट ॥ जन पाय पाय सुनावत ए गहू डसबे ही में रहत बन ॥

छप्पे

विद्या नर को रूप प्रगट विद्या सुगुप्त धन॥ विद्या सु

ख दिस देत संग विद्या सुबुध जम ॥ विद्या सदा सहाय देवता हू विद्या यह ॥ राखत विद्या मान लसन विद्याही सों रह ॥ सब भांति सबन सों अति बड़ी विद्यासों ब्रह्मा कहावत ॥ शिव विस्न हूं बिधा बस करन न्रपतन्याय विद्या चहत॥ ९० ॥ साजन सों हित रीति दया परिजन सों राखहु ॥ दुर्जन सों सठ भाव प्रीति संतन मधि भाखहु ॥ कपट खलन सों राखि बिनय राख्यो बुधि जन सों ॥ छिपा गुरुन सों राखि सुरता बैरागिन सों ॥ धूर्तता राखि जब तीन सों जो तू जग बसि बीच है। अति ही कराल कलि काल न इन चालन सों सुख सरै॥ ॥ ९१॥

छप्पै

करत करन तें दान सीस गुरु चरनन राखत ॥ सुख सों बोलत सांच भुजन सों जय अभिलाषत ॥ चित्त की निर्मल वृत्ति एक अम्रत सों अति ही ॥ तैसें ही कर धीर काज निर्भै कर मतही ॥ सब दोष रहत और गुनसहत ऐसो कारज मन धरत॥ ताको जु अर्थ अम्रत लहत कोऊ दुख कोनाहिं करत ॥ ९२॥ धीर धरा को सीस अति करि वो आक्रम ॥ सेस कमठ और भूमि कमठ धरि रख्यो बिनाश्रम ॥ कम शेषा अरु भूमि दारा हि रख्यो दूरि ॥ इन सबहिन को भार एकजले आश्रित कर ॥ एक सों एक बिक्रम अतिक करत बड़ अध भुत सकत॥ तिनके चरन समार हित अतिबिचित्र राखत सुव्रत॥

दोहा ॥ करत नाहि उपदेश कछु तोऊ करो सतसंग ॥
संत पुरुषन की बात ही देते चित को रंग ॥ ९४॥

पुन्य परा क्रम करि मिली रहत भजन के मांहि ॥ मोढा

बनिता ज्यों बिनय छांडो चाह न नाहि ॥ छप्पै ॥
भैया लज्जा गुसान की निज माया सम जानि ॥ तेजबंत
तिन को तजत याको तजत भजाल ॥ याको तज तमजा
न सत्य भ्रत बारहे नर ॥ करत मान का त्याग तजत नहिं
नेक बचन बर ॥ टेक आपनी राखिर हो बद दशरथरा
खा ॥ बल हरचंद टेक यह जस की भाषा ॥ ९६ ॥ महाभू
मि को भार कहो कछु अहि लन लागत ॥ निसदिन भ
टकत भानु कहो दुख में नहिं पागत ॥ हरे रहत नहिं
सूर कमठ हू मार न डारत ॥ तो नर कैसे धीर बीर अप
ना या बिसारत ॥ वह लेत भार निज भुजन पर नाहि नि
बाहत हित सहित ॥ सत पुरुषन को कुल धरम संचित
करि राख्यो सुचित ॥ ९७ ॥

दोहा

सन्मुख आये शत्रु को जीत लेहु धन धाम ॥
परि बहूंम स्वर्ग सुख होत प्रयाम को काम ॥

कुंडलिया

कामी कबि दोऊ मिले औगुन गुनहिं समान ॥ भोग दु
रित मन धरत कबि गुन अर्थ बखान ॥ कबि गुन अर्थ ब
खान बचन कामी हित बोलत ॥ सबद बया क्रम हीन
तौ ने कबि कबि हू न तोलत ॥ क्रिषई धर पदि मद सुक
बिहु मद पर गामी ॥ दोष रहत कबि लोग भजन भरि
पकरत गामी ॥ ९८ ॥

दोहा

जल धर जल बरसत अगाध पपिहा बूंद जो लेत
जे हो जाके भाग में ता दिन तो ही देत ॥ १०० ॥

करत उबटनो अंग न्हाय के अतर लगावत ॥ चन्दन चर
चित अंग बसन बहु भाति बनावत ॥ पहर रतन की
माल रतन के भूषन साजत ॥ यह नहिं शोभा देत नेकबो
लत जो साजत ॥ सबही सिंगार को सार यह बानी बर
सत अम्रत भर ॥ तिनहु सुनत सबन को मन हरत
रजै रहत नित न्रपति वर ॥ १०१ ॥

दो० ॥ नीति मंजरी पढ़तही प्रगट होतिहै नीति ॥ व्रजनि
ध के मन लाल करी प्रतीत ॥ १०२ ॥ इति श्री मन महाराजा
धिराज राज राजे श्री सवाई प्रतापसिंहजी देव बिरचित
नीत मंजरी सम्पूर्णम



श्री गणेशायनमः

अथ सिंगार मंजरी लिख्यते

छप्पै

चन्द्र कला पय कान्ति वाति बहु भांति नसावत ॥ जास्वों काम पतंग बिनु भयो जु परसत ॥ महा मोह अज्ञान हृदय को तिमिर नसावत ॥ अपनो आतम रूप प्रगट करि ताहि दिखावत ॥ दुति दिपत अखंडित एक रस अद्भुत अतुलित एक वर ॥ जग मगत संत चित सदन में ज्ञान दीपजय जयत हर ॥ १ ॥

दोहा

शुभ कर्मन के उहद में गहत पन्दित सब ठौर ॥ अस्त भये तीनों नहीं ज्यों मुकता बिनु डोर ॥

दीपक गावर विवेक ज्यों तो लों या घट मांहि
तो लों नारि कटाक्ष पट जब लों लागत नांहि
पीन लंक अति पात कुच लिय तियके दृगतीर
जे अधार नहिं करत मति धनि २ बहु धीर ॥ ४ ॥

छप्पै

करत जोग अभ्यास आप मन बस करि राख्यौ ॥ प्रेम ब्रह्म सों प्रीति प्रघट जिन ये सुख चाख्यौ ॥ तिन कौंतिन के संग कहा मुख बामन छै है ॥ कहा अधर मध्यान कहा लोचन छबि है ॥ मुख कमल स्वास सोगंध कहा २ कठिन को परसि ॥ परमन चका हू जहा जोगी मन एकरस

कुंडलिया

पंडित जन तप सब कहत तिय लिवह को बात ॥ के करन वृथा बकबाद वह तजी नेंक नहिं जात ॥ तजी नेंक नहिं जात गात छबि कनक बरन ॥ कमल पत्र समनैंन बचन बोलत अम्रत हर ॥ साहस सुख म्ट दु हास अंग आभूषन मुदित ॥ ऐसी तिय को को तजे कैधों ऐसी पेंडित ॥

दोहा

मद गज कुंभहि सिंह सिर कर तशास परिहार
मदन राज जीते जिन्हे इसी पुरुष नहीं संसार
रस में त्यों ही ऐश राजत आप अनूप ॥
बालनि चलन निंनोल में बनिता बंधन रूप ॥
नूपर किंकन किलना बोलत अम्रत बैन ॥
कागा मन बस करत सही म्टगनैनी के नैन ॥
तीन लोक तिहु काल में महा मनोहर नार ॥
दुखहू की दाता यहे देखा सोच विचार ॥ १०॥
कामिन कसकत सहन में मूरख मानत प्यार ॥
सहज अफुल्लित कमुदनी भंवरा अंध गवार ॥ ११॥
अच्छु काम की कामिनी जो नहिं होतो हाथ॥
तौ काहू सिर न नवावतो तपकर होत सनाथ ॥ १२॥
बन म्टगान के दैन को हरे २ त्टण लेहु ॥
अथवा पीर पान को बीरा बंधन लेहु ॥ १३॥
जदपि नारि सनीर अति अबतो जल को संग ॥
तऊ पन्यते यापपे महा मनोहर अंग ॥ १४॥
नीत बचन सुन अनपतिज कारज लखि भेद ॥
कै तो सेवो गिर बन कै कामिन कुच सेव ॥

छप्पै

करि कारे बांके नैन कहां तू हमहिं निहारति ॥ करत छ्या
ही बंद बांधि धन बसन संवारत ॥ हम बनवासी लोग
बालापन खोयो बनमें ॥ तजी जगत की आस कामना रही
न मनमें ॥ त्रण समान जानत जगत मोह जाल तो सें
तमकि ॥ आनन्द अखइत पाप हम रहे ज्ञान की छाक
छकि ॥ १८ ॥ त्रस्ना सिंधु अगाध को कोऊ न पावत पा
र ॥ कामिन जोवन हीन पर प्यार न छोड़त जार ॥ १९
घटा चढ़ी सिर मोर गिर हरी भई भूमि सब ॥ बिरही दग
डोर कहा देखि रसों ज्ञिय धूम ॥ २० ॥ (छप्पै)
अलप सार संसार कहावै बात शिरोमन ॥ ज्ञान अस्र के
सिंधु मगन के रहे बुद्धि वन ॥ नित्या नित्य बिचार
सहत सब साधन साधे ॥ कै यह नौढ़ाढार धारि उरमें
आराधे ॥ चेतन मदन अंकुस परसि सक तक कस क
त करत रिस ॥ रस मस्तक कबि लसत हंसत इन्द्र बि
धि वत वहु दिवस नित ॥ २१ ॥ पीन लेक कुच पीन नैन पं
कज से रजत ॥ भौंहें बनी कमान चन्द्र सो मुख छबि
छाजत ॥ मद गयंद सी चाल चलत चित चोरत ॥ ऐसी
नारि निहारि होत पंडित जन जोरत ॥ अति ही मलीन
सब ठौर अति चित गलित भरी अनेक छल ॥ ताको सुमान
प्यारी कहत अहो मोह महिमा प्रबल ॥ २२ ॥ कबहुं भो
ह को भंग कबहुं लीला रस बरसत ॥ कबहुं ससका
संक कबहुं लीला रस बरसत ॥ कबहु कि चयन्द हा
स कबहुं हित बचन उचारत ॥ कबहुं कि लोचन के
र चपल बहु दारनि हारत ॥ छिन चीरत्र सु बिचित्र कै

रि कमल निमद मदन अंकुश छबि छाजत ॥ ऐसो अ
निपति रूप लख हरषत रहिये दिवस निश॥ २३ ॥

(छप्पय)

करत चन्द्र छबि मंदन मंदन अंकुश छबि छाजत ॥ कम
ल न बिंहसत रैन नैन दिन प्रफुलित राजत ॥ करट
कनक दतिहीन अंग आभा गति उमगति ॥ अलकात
जीते मोर कंचन कर कुम्भ किराहत ॥ मृदुता शरी
र मारे सुमन मुख सुरश सम्टग मद कदन ॥ ऐसी अ
भूपति रूप लखि धूपछांह नहिं गिनत मन ॥ २४ ॥
करत चतुरता मोहन मन हीन चत चितौबो ॥ प्रगट
सचित को चाव चोप से मृदु मुसकेखौ ॥ दुरतमुरत
सकुचात गात अरसात जपलागत॥ उझकत इत उत
देखिचलत बैठत छबि छाजत ॥ यह आसुपन तियन
के अंग अंग शोभा धरन ॥ अरु ऐही सस्त्र समान हैं
जब जन मन मृग बध करन ॥ २५ ॥

सोरठा

नहीं बिष नाहीं अम्टत हूं एक तियजो जान ॥ मिलमें अ
म्टत नदी बिछुरे बिषकी खान ॥ २६ ॥ बिहसत बरसत फू
ल से दरसत पोष अलीक ॥ परसत ही सतगत हरत रम
नी अतिरमनीक ॥ २७॥ सुधि आरा सुध बुध रहत दर
सत करत अचेत ॥ परसत मन मोहन करत यह प्या
री के हेत ॥ २८॥

(छप्पै)

परम भरम को भौंर सब हैं गूढ अनुबिभ्रत को सिंध
फांस है दोस भरव को ॥ प्रगट कपट को कोट खेल प्र

नीत करन को ॥ सुर पुर को बटमारन पुर द्वार नरका
को महा ॥ अस्तत बिस सो सरयो थिर चर किनर सुर अ
सुर सबके दृढ़ बंधन करो ॥ २९॥ इन्द्री दम ले जाय
बिनय जो लों सुभ सुत कर्म ॥ तो लों नारी नयन सर भे
दत नांही मर्म ॥ ३०॥ अधर सुधर मधु सहित मुख
हतो सबन सिर मोर ॥ अब बिगरे फलन ज्यों भया
और सों और ॥ ३१॥

(छप्पै)

तो असार संसार जान संतोष न तजते ॥ मरि भार कभ
रे भूप को भूलि न भजते ॥ बुधि बिबेक निदान मान
अपनो नहिं देते ॥ हुकम बिरानो लाखि लाख संपति
सहि लेते ॥ जो यह नहिं होती शशि मुखी म्टगनैनी
केहरी कटि ॥ छबि छटी छटा कैसी छटा रस छपटी छ
टी लटी ॥ ३२ ॥ म्टग नैनी के हाथ अरगजा चन्दन
लावत ॥ छुटत फुहारे देख पहुप सिज्या बिरमावत ॥
चौहू चांदनी मंद मंद मारत को औबो ॥ बजत बीन सं
ग गायन को गैबो ॥ चांदनी उजेरे महल की निरखत
चितगत हित टरत ॥ पुरुषन को ग्रीषम विवभ भैराग्य
दनहि बिसजरत ॥ ३३॥ सब ग्रंथन के ज्ञान अरु नी
त बान नर ॥ तिन में कोऊ कहो मुक्ति मारग में तत्पर
॥ सब को देत बहाय कनपनी नारी ॥ जाको वाको मो
हत चहत अति ही आन परी ॥ यह कुवीन रकरी ॥ न
के खोलन को उहकत फिरत ॥ जिन के न लगत [illegible]
दृगन में तिनब सागर को तिरत ॥ ३४॥

। त्रबली तरल तरंग लसत कुच चक्र वाक सत ॥ अ.कु

लित आन कजवारि यह नदी मनोरम ॥
महा भयानक चाल चलत नव सागर सन्मुख ॥ हा
त धरत आमनात जिनको अपनी रूख ॥ संसार सिं
धु चारत तिस्यो तोलू यासों दूरि रह ॥ जाको प्रभाव
अति ही प्रबल सैक ध्यात ही जात वह ॥ ३५ ॥
कान निरंत गान तान सन बोही चाहते ॥ लोचन
चाहत रूप रैन दिन रहत सराहत ॥ नासा अंतर च
हत सुगंध फूलन की माला ॥ त्वचा सहत सुख सेज
संग कोमल तन बाला ॥ रसना हू चाहत रहत नित षा
हे मीठे चरपरे ॥ इन पन्चन मिलि या प्रपंच सों भूपन
को भिक्षुक करे ॥ ३६ ॥

(सोरठा)

जो नहिं होती नारि तो तिरबो जग में सुगम ॥
यह लंबी तरवारि मारि लेत अध बीच ही ॥

कुंडलिया

रेरे मन मेरे पथिक तन जाहु इहं ओर ॥ लक्नीत न
वन सघन में कुच परबत बरजोर ॥ कुच परबत बर
जोर चोर एक तहां बसत है ॥ जो कोऊ वा मग जाहि
वाहि को वह गरसत है ॥ लूटि लेत सब माल पकरि
कर राखत चेरे ॥ मूंदि नयन और कान चस्यो तू कित
कू रेरे ॥ ३८ ॥ यह जोबन धन पाय सदा सोहत सिंगा
र तर ॥ क्रीडा रस को सोत चतुरता देत रतन कर ॥ नारि
नयन चकोर चोपको चंद बिराजत ॥ कुसमायुध के
धाम सिंह सोभा को भ्राजत ॥ ऐसो यह जोबन पा
य के जे नहिं धरत विकार मन ॥ वहु धरम धुरंधर

धीर मन सूर सिरोमणि संत जन ॥ ३९ ॥
कहा देखिये जोग प्रिया को अमित अरंग सुख ॥ कहा सुधि ऐसोधि स्वांस सौगंद हरत दुख ॥ कहा दीजिये कान भाग प्यारी की बातन ॥ कहा लीजियो स्वाद अधर के अमृत अघातन ॥ परस एक हित पको सुनत ध्यान कहा जो बनसुछबि ॥ सब भांति सतो गुन को सदन जात सुजस गावत सु कवि ॥ ४१ ॥
जात हीन कुल हीन अध कुछत कुरूपनर ॥ जरा न ग्रसत कसगात गलत कुष्टी और पावर ॥ ऐसे धनवान होयजो आदर वाको ॥ अपनो गात बिछाय लेत रस कस जो जाको ॥ गनिका बिबेक की बेल को कटन करन वारी निरख ॥ बन्धि रहे बडे कुलवंत नर पचत रचत मूरख ॥ ४२ ॥

दोहा

गनिका के मुह वाठि को कुलीन चवनकरे
नट बट बिट ठगठोठ पीक है पानसबनको
॥ ४३ ॥

दोहा

गनिका के तनिका अगिन रूपसमुद्रमजबूत
होम करत कासी पुरुष तन मन धन आहूत

दोहा

रितु बसंत कोकिल कहू कित्यौही पवन अनूप ॥
बिरह बिपति के अरत अमृत बिष रूप ॥ ४५ ॥

कुंडलिया

कामिनि सुग्रा काम का सकल अर्थ को देत ॥
मूरख वाको तजत हैं झूठे फल के हेत ॥ झूठे फल

के देत तजत तिनकी को दाडे ॥ गढ़ि मूडे मूढ़ वसन विनु करि कार छोडे ॥ भगवां करिके भेख जटिलके जागत जासिन ॥ भीख मांगिके बात कहत हम छोडी कामिन ॥ ४८ ॥

(दोहा)

काम केरि भव सिंधु में फांसी डारी नारि ॥ मनी नरन की गह पचत प्रेम अगिन को वार ॥ ४९ ॥ मृग नैनी हंसि रहस मंहित बचन सुख देत ॥ करत को उदित अतिकछु अद्भुत हर लेत ॥ ५० ॥ केसरि सों अगियों सनी नयन कोनोंक ॥ मिली आन प्यारी मनौ घर आयो सुर लोक ॥ ५१ ॥

कुंडलिया

केसरि चरि चित पान कुढर काठ मुक्ताहार ॥ नूपर झुनकत मचत दृगलचकत कटि सफमार ॥ लचक त कटि सुकमार छुटी अलकें छबि छलकें ॥ उडकत इत उत देख गुरत उधरत सी पलके ॥ लसत हंसत सी भोंह फसलचित निरखत बेसर ॥ अद्भुत अतुलित अंग रंगसी नाहिन केसर ॥ ५२ ॥ दोहा ॥

अरुन अधर कुच कठिन दृग भौंह चपल दुखदेत ॥ सुथिर रूप रोमा वली ताप करत किह हेत ॥ ५३ ॥ मनमें कछु बातन कछु नैनन में कछु और ॥ चितकी गति और ही यह प्यारि केहि हेतु ॥ ५४ ॥

छप्पै

बिन देखे मन होत याहि नीके करि देखे ॥ देखेते मन होत अंग आलिंगन पेखे ॥ आलिंगिन ते होत याहि तनमय

फ़र रार्खे ॥ जैसे जल और दूध एक रस त्यों अभिन्न रखे ॥ मिलि रहे तोऊ मिलिबो चहत कहा नाम्र सा बिरह को ॥ बरनो न जात अद्भुत चरित्र प्रेम पाट की गिरह को ॥ ५८ ॥ खुले केश चहुं ओर फेल फूलन को बरसत ॥ मद २ छाके नैन सुरत उधर न से दरसत ॥ सुरत खेद के खेत कलिन सुन्दर कपोल गहै ॥ करत अधर रसपान परम अमृत सम्मान नाहिं ॥ वह धन धन सुकृती पुरुष जो ऐसे उडुहै रहत ॥ हित भरे रूप जुबना भरे हू पात सुख संपत लहत ॥ ५९ ॥

कुंडलिया

जै है नहिं जो पथिक तू भादों में निज भौन ॥ तो तिय जियत न पाइये करि जैहै निज गौन ॥ करि जै है निज गौन पौर परवाई आयें ॥ मोरन को सुनि सोर घोर घन के घहराये ॥ देखत फूले फूल फूल फूलेहु लहरा ए ह्वैहै ॥ चपला चमकत चाह आह कर करि मर जैहै ॥ ६० ॥ दोहा ॥ गेह २ कहा होत है जो वह जीवत नाहि ॥ जीवत है तोऊ कह घरा चढी नभ माहि ॥ ६१ ॥ जो न होत सुख परस पर बिहरत सुरत समाज ॥ तो वह दोऊ करत हैं काम निबाहन काज ॥ ६२ ॥ छप्पै ॥ नाना कहि गुन प्रगट करत अभिलाखत जुत ॥ सिथल होय घर धीर प्रेम की इच्छा करि जुत ॥ निर्भय रस को बेल सेज रन खेत हि मांही ॥ क्रीड़ा मांहि प्रवीन नारि सुखिया मन मांही ॥ अह सुरत मांहि अति ही सुरीत करत हरत चित गात हरे ॥ कुलबधू कामनी केलि के कल काम की सबद रे ॥ ६३ ॥

दोहा ॥ जौलों नारी नयन ढिंग तौलों अम्रत वेल ॥ दूर भये तेजरु सम जगत बिरह की सेल ॥ ६४ ॥ कामिन कुक्खी काम यह नेन सेन अगठान ॥ तीन्यौ लोक जीत्यो मदन ताहि कात निजहान ॥ ६५ ॥ मंत्र दवाओ अधीन ते बेद न मिटै न बेद ॥ काम कान सों म्टद मन कैसे मिटि है खेद ॥ ६६ ॥ दीप अगिन मन्य चंद्रमा जगमग ज्योति सुढार ॥ म्टग नैनी कामिन बिना जगत सबै अंधियार ॥ चन्द्र कान्ति सम मुख लसत नीलम के सहि पास ॥ पुराध राग सम करल सों नारी रत्न प्रकाश ॥ ६८ ॥ भौं है काली कुटिल अति हैं नागिनी समान ॥ कसत लसत ऐसी मनो फन कर दौरत पान

(छप्पै)

केश राहु समजान चंद सो सोहत आनन ॥ द्वादश में है और नैन के लेहि अल कानन ॥ मंद हास हँसन का बुद्धि बानी कर जानो ॥ सुर गुर जानो राज करन मंगलहि बखानो ॥ अति मंद चाल सोह मंद गति महा मनोहर जुबति यह ॥ सबही फल दायक देखियत जाको सेवत नो निरह ॥ ७० ॥

दोहा ॥

अति अद्भुत कमनेत तिय कर में बान न लेत ॥ देखो यह बिपरीत गति गुनते बेदत चेत ॥ ७१ ॥ छप्पै ॥ अनुरागी जगमाहि एक संकर सरसाने ॥ पारवती अरधंग हुत निष दिन लपटाने ॥ बीत राग हु भये एक जो जिन देव बर ॥ तजो तियन को संग सदा तपसी में ततपर ॥ जड़ जीव और या जगत के मदन महा बल के ठगे ॥ नहिं बिषम भोग नहिं जोग हू धोही जी

लत डगमगे ॥ ७२॥ मंत्र दवा औओषधीनतें तजत सर्व बिष लाग ॥ यह क्यों हूं उतरत नहीं नारनयन को नाग ॥७३॥ बिछुरन ही में मिलन होजो मन मांहि स नेह ॥ बिना नेह के मिलन में उपजत बिरह अछेह ॥ नारी नागिन नैन ले डसत दूरते मित्र ॥ जतन करत ज्यौं ज्यौं बढ़त बहु बिष अति ही बिचित्र ॥७६॥ क्यों तेरे चित चट पटी शोभा संपति पाय ॥ पुन्य पात्र को परसि के फेरे क्यों न मन लाय ॥७७॥ बिरही जनम न तप करें बन अवला सोरे ॥ धिगहू पंचम टेरिये बरिये किय बौरे भौरहे मन नाय उदे पाडल के महकत ॥ फूलन लगेप लास दसौ दिश दोषहु दहक ॥ मलियागिर सी पवन हु काम अगन प्रफुलत करन ॥ बिन कंत बसंत असंत ज्यौं चोरि रहो कहि नहिं टरत ॥७८॥

दोहा

दमकति दामिन मेघ इत केतक पहुप प्रकाश ॥ मोर सोर स दिनन में बिरही जनमन त्रास ॥७९॥ नबतरु नी रति चतुर बिजय काम को देन ॥ अङ्कुत करत बिलास पहा कछु अङ्कुत हरलेत ॥ ८०॥ कोकिल फल को लीलता चेत चांदनी रैन ॥ मिया सहत निजमहल में सुकती करत सुचैन ॥८१॥ शशि बदनी अरु कामशशि चन्दन पहुप सुगंध ॥ ए रसिकन के मन हर तनके चित बन्द ॥८२॥ महा अधम नभ जल दामिन दमकत दुरात ॥ हरष शोक दोऊ करत तिया कोपे दिगभ्रात ॥

छप्पै

खंजन गरल केशान पनहू कामन चारी ॥ मुखहू माहि प

चित्र रहत ठान संवारी ॥ ऊपर मुक्ता हार रहत निसदि
न छब छाये ॥ आनन चन्द उदास रूप उज्जल सर
सायो ॥ तेरो तन तरुनी मृदुल अति चलत पाल धीर
ज सहित ॥ सब भांति सती गुण को सदन तऊ करत
अनुराग चित ॥ ८५॥

(दोहा)

तबही लों मन मानिये जबही लों मन मानिये तबही लों
भूअंग ॥ जौलों चन्दन सों मिलो पवन परसत अंग ॥
पावस पयोधर को चलत अगठ करत है काम ॥ पावस अ
रु प्यारी निरखि होत तमाम ॥ नव बादर अरु जीव हर
कुंज कदंब सुगंद ॥ पेर और रमनीक बन सब को सु
गंद ॥ ८७॥ महा माह में सीत इते पै जल धर बरसत ॥ म
हलान बाहर पाव परत नहीं अति ही थरसत ॥ कम होत
जब गात तबही प्यारी तबही प्यारी संग सोवत ॥ उठत
अनंग तरंग अंगमें अंग समोवत ॥ रिवि देवदि २ के
छेदन करत जालीरन्ध्र आवत पवन ॥ इहि भांति वि
ताव दूर दिस बनज सुकील सुख के भवन ॥ ८८ ॥

(छप्पै)

छाके मदन छके के छाक मदरा के छाके ॥ करत सुरत
रन रंग जंग करि कछु एक प्याके ॥ पोढ रहे लिपटा
य अंग अंगन में उरहै ॥ बहुत लगी जब प्यास तब
ही चित चाहत सुर है ॥ उठ पियत रात आधी गये सी
तल जल या सरद को ॥ नर धन्य बंत फल लेत निशु सु
कीती फरद को ॥ ८६॥ दोहा ॥ जिनके पाहे सत भांति
यान तन लिपटाय ॥ तिन काज मन के सदन की लागत

सोरठा

दही दूध घृत पान बसन मजीठहिं रंगके ॥ आलिंगन रति दान केसर नीकि च हिमंत में ॥ ९१ ॥ बिलकुल क रत सु केसन पनही छिन सुरत ॥ बसन न अचें लेत दोह रोमांचन रूचत ॥ करत हृदय को कंप करत मुखहू सो सीसी ॥ पीड़ा करत है बीठ व पराह नारि नारिसरीसी यह सीत कलि से जानिये अद्भुत गात धारत पवन ॥ नित दौसरे दपके रहौ निज नारी संग निज भवन ॥ ९२ ॥ सुवन करत कपोल मुखसहिकार करावत ॥ हृदय माहि धसि जात कुचन पर शेख बढ़ावत ॥ जघन को यह रत बसन धारी करत उकि ॥ लर्ष्या रहत है संग द्वार को कहा करै घाडिक ॥ यह सिसर पवन रूप धरि गलिन गलिन भटकत फिरत ॥ मिलि रहे नारि नर घरन में याकी सट भेरन भरत ॥ ९३ ॥

दोहा

जो जाके मन भावतो ताको तासों काम ॥ कमल न चाहत चांदनी बिगसत परसत भान ॥ ९४ ॥ बासकीजिये गंगातट पाय निवारत डार ॥ के कामिन कुच जुगल को सेवन करत बिचार ॥

कुंडलिया

जैसे सुख दुख रहत हैं गुर अन्या में ध्यान ॥ त्यागकिये संसार को व्रजनिधि भक्ति अनान ॥ व्रज निधि भक्ति अन्यन गुफा हेमाचल सबै ॥ कुच कठोर नारवहै जौवन न बिति बे ॥ तप करि जोवन छीन किये सुखही मेंहे यह ॥ दोहा ॥ एहु प मारा पषाव पवन चंदन चंद सुहारि॥

मृगनैनी कामिन बिना लगत सबै अंधियार ॥ ६८ ॥ अधरन में अमृत बसै कुच कठोर ता बास ॥ ताते इन को तेल रस उनको मरदन कास ॥ ६६ ॥ जैसे रोगी पत्य को पापो जानत नाहि ॥ तैसी ही तिय मुखनिरखि रुचि मानत मन मांहि ॥ १०० ॥ महा मात इहि प्रेम को तबतिय करत उद्दोत ॥ तब बाके छल बल निरखि विधि हू का घर होत ॥ १०१ ॥ का काहू के बैराग रुचि काहू कु रुचि नीति ॥ काहू को सिंगार जुदी २ यह रीति ॥ १०२ ॥

इतिश्री महाभारताधिराज राज राजेन्द्र श्री सवाई प्रतापसिंहजी देवबिरचित सिंगार मंजरी सम्पूरण ॥ शुभम ॥



श्रीगणेशायनमः

अथ वैराग्य मंजरी लि

ख्यते

सोरठा

सर्व दिशा सब काल पुरि रह्यो चैतन्य धन ॥ सदा एक रस चाल वेदन वा पार ब्रह्मके ॥ १ ॥ छप्पै ॥ पंडित में छविता भरे मूरख भरे अभिमान ॥ और जीव या जगत के मूरख महा अज्ञान ॥ मूरख महा अज्ञान देखिके संकट सहिये ॥ छन्द प्रावंध कवित्त काव्य साका सो कहिये बुद्धि भई मन मांहि मधुर वानी गुन मंडित ॥ अपने मन को मारि मौन गहि बैठे पंडित ॥ २ ॥ या जग सों उत्पन्न भजे जे चरन मनोहर ॥ ते सबही छिन भंग प्रगट यह पुरि रह्यो डरि ॥ जज्ञादिक ते स्वर्ग गये लेक भय मानत ॥ इन्द्र आदि सब देव अवधि अपनी को जानत फल भोग करत जे पुन्य को तिनको रोग वियोग भय ॥ दुख सकल सुख देखि को भय संतति जन ज्ञानमय ॥ सहि गार और खीज हात हारत धरि आयो ॥ दूर स्वान ज्यों धारि धर खायो ॥ इह भांति नचाये मोहित बहु कायो ॥ दे लोभ भल ॥ अजहुं न ताहि सराप कहु तृषा तु पायन प्रबल ॥ ॥ ४ ॥ खोदत डोल्यो भूमि गढ़ी कहां पावति संपति ॥ धोकत रह्यो पखान कनक के लोभ

लगी भति॥ गयो सिंधु के पास तहां मुक्ता नहिं पायो॥ कौडी कर नहीं लगी न्टपत को सीस नवायो॥ साधे प्रयोग ससमान में वैताल भजि॥ अजहुन तोहि संतोष कहु अब तो तृष्णा मोह तज॥ ५॥

एहे खलन के बैन दूते पै मनहिं रिझायो॥ नैनन को जल रोकि सु मन मुख मुस्क्यायो॥ देत नहीं कछु चित तऊ कर जोरि दिखाये॥ कीर २ चाव के पेर भोर ही दोरत आयो॥ मन आस पास तेरी प्रबल नु अद्भुत गति गहत॥ इहि भांति नचायो मोहि अब और कहा किपवो चहत॥ ६॥ उदै अस्त रवि होत आप को छीन करत नित॥ मह अंधे के मांहि समय बीतत अजान चित॥ आसो देखत जन्मजरा अरु मरण बिपति हू॥ तोऊ डरत नहिं नैक नैन हू नायक करणा हू॥ जग जीव मोह मद रा पिये छाके फिरत अगार में॥ सब गिरत उठि २ फिर गिरत विषय वासना स्वाद में॥ ७॥

फाटौ पुरानो चीर ताहि खेंचत और धारत॥ छोटे मोटे बाल भूख ही भूख पुकारत॥ घर मांही नहिं धान नाहिं यु दिदरा याते॥ भई महा जड रूप कछु मुख कहत न बातें॥ यह दशा देखि अखरत नित जीब तरथर रुकत सुरत॥ आप नजर पानु दर हित देह कहत न पुरुषन॥ ८॥ भारी भोग की चाह गयो गौरव गुमान सब॥ मित्र गये सुरलोक अकेले आप रहे अब॥ उठत लाकरी टेक तिमिर आंखन में छायो॥ खबर सुनत नहिं तऊ चकित होत साखी सुनत॥ देखो बिचित्र गति जगत की दुखहू को सुखसों लुनत॥ ९॥

विन्नु उद्यम बिनु पाय पवन सर्पन को दीनो ॥ तैसे ही सब ठौर या सप त्रुवन को कीनों ॥ जिनको निर्मल बुद्धि तिरन भवसागर समरथ ॥ तिनके टुबर हति हरन गुन ज्ञान ग्रंथ मत ॥ बिधि अबिधि करत अधिकन्नि ति गालें नर घर धर फिरत ॥ निसधोस पन्चत तन मन तन्चत न्चत न्चत उरझित गिरत ॥ १०॥

बिधि सों पूजे नांहि पाय प्रभु के सुखकारी ॥ प्रभु को धस्यो न ध्यान सकल भव दुखको हारी ॥ खोले स्वर्ग कपाट धमाहू कियो न ऐसो ॥ काभिन कुन्च के संगरंग भर रयो न तैसो ॥ हरि हाय कीन्यो कहा पाप पदारथ नर जनम ॥ जननी जोबन दहन को अगिन रूप अग ट सुहम ॥ ११ ॥

भोग रहे भरि पूर आयु यह भुगत गई सब ॥ तप्यो ना हिं तब मूढ़ अवस्था बीत गई सब ॥ काल न कितहू जात बैस यह चली जात नित ॥ वृद्धि भई नहीं आस बुद्धि व्यय भई छांह हित ॥ अजहों अचेत चित चेत करि देह गेह सों नेह तजि ॥ दुःख हरन मंगल कर न श्री हरि के चरन भजि ॥ १२ ॥

छिमा बिन कीन छिमा बिन संतोष न जे सुख ॥ सहे सीत धुत बिना घर्म तपे पाय महा दुख ॥ धस्यो बिष य का ध्यान चन्द्र से बरनाह धायो ॥ तज्यो सकल सं सार प्यार जब उन बिसरायौ ॥ मन करत काज सो ठीक रे फूल दीखत बिपरीतिश्रुति ॥ अबतो कहा चिन्ता किये अ जहोंकरि हरि चरन रति ॥ १३॥ खेद्यार बिन दसन बिनु बदन सज्यो ज्यों कूप ॥ गात सबै सिथलत भयो वो दसा

नरुण सचरूप ॥ १४ ॥ इक अंबर के टूक को बिसमें बोढत चन्द ॥ दिन में बोढत नाहिं रविनु कों करत छछेद ॥ १५ ॥ छप्पै

जे ले चारे भोग कहा जो वह विधि बिलासे ॥ सदा सदन संग रहत नहिं कों हू मिलासे ॥ तो सों तजि हौ नाहिं आप ही यह उठ जैहै ॥ तब होइहै संताप अधिक चिन्ता दुइ दै ॥ जातजे आप यह विषय सुख तो सुख होत अनंत अति ॥ दुस्तर अपार भव सिंधु के पार होत यह बिमल मति ॥ १६ ॥ दुबरो कायौं हीन अधरा बिन पूछ नवायो व हो बिकल बिकल शरीर बार बिनु छार लगायो ॥ करन वास तें राधि रुधिर कम झरत डरत ॥ छुधी छीन अति दीन गर्गना कंठ किलोलत ॥ यह दसस्तान गाई ईतउ कुलिया सों उरकत गिरत ॥ देखो अनीत या मदन की मृतकन को मारत फिरत ॥ १७ ॥ भीष अंत इकबार लों न बिन खाय रहत हो ॥ फाटी गूदरि अहम की छांह गहत हो ॥ घास पात कछु डार भूमि पे नित प्रति सोवत ॥ एरवो तन परिवार ताको यह ढोवत ॥ इह भांति रहत चाहत न कछु तऊ बिषय बाधा करत ॥ हरि हाय हाय तेरी सरन आय परो इन सों डरत ॥ १८ ॥ कुच अमिष की गांठि कनक के कलस कहत कति ॥ सुखर कफ को धाम कहत शशि के समान छवि ॥ झरत मूत्र भो र धात भरी दुर्गंध ठौर सब ॥ ताको चंपक बेलि कहत रस रख ठेल देव ॥ यह नारि निहार निंदित सबै उह के बिसई बावरे ॥ ताके बढ़ायबे को निरद बो ते बहुत उतावरे ॥ १९ ॥

जानत नाहि पतंग भवन को तज भई छाम ॥ गिरत रूप को देख जरत अपने अबिबेकन ॥ तैसे ही यह मान मांस को लोभ लुभायो ॥ कंटक जानत नाहि ध्याप वह कंठ छिदायो ॥ हम जानि बूझि संकट सहत छांडि सकत नहिं जगत सुख ॥ यह महा मोह महमा अचल देत दुहन को दोय दुख: ॥२०॥

दोहा

धूमि ससन वलकल बसुन फल भोजन पाठ पान ॥ अब मेरे इन न्टपति सों रह्यो नाहि कछु काम ॥ २१॥

छप्पै

भये जगत में धनि धार जिन जगत रच्यो है ॥ कोऊ धारो माहि सुनो नहिं नेक लच्यो है ॥ काहू दीन्यो दान जीत काहू बस कीन्यो ॥ भवन चतुर्दश भोग करवो कहा जस लीनो ॥ एक अधिक भरा तुम हो तिन में तुछ बित ॥ दस बीस नगर के न्टपति है यह मद बीज्वर तोहि कित ॥ २२॥

तुम प्रथ्वी पति भूप भरे अभिमान विराजत ॥ हम पाय गुरुन के गेह बुद्धि ताके बल गाजत ॥ तुम धन सों बिख्यात सुकबि गावत के पावत ॥ हम जस सों बिख्यात रहत निस द्यौस बढावत ॥ तुम हम बीच अंतर बडो देखो सोच बिचार चित ॥ ऐसे पर जो मुख फेरि हो तौ हम को एकात हित ॥ २३॥

किनहीं छांडी नाहि भोग भुगती वह भूपन ॥ कलदासी यह भूमि लाभ मानत सही पमन ॥ ताहू कई के अंग हि पावत ॥ राखत है कष्ट रैन दिन रहत बडा

वत॥ अपनी ओर की हाथ यह बातें नर पच्चि पचि रहे
इढ ज्ञान गोपीचन्द से बुरी जान के बचि रहे॥ २४॥
इक मृत्तिका को पिंड रहत जल मांहि निरंतर॥ सोऊ
सबही ताहिन तक सो ता में इड़ करत हजारन भुपन्ग
तब करत भोगपति॥ मिटत न अपनी प्यास तनकौ
होत कछु चिन॥ ऐसे दरिद्र पुरुष के भरे तिनहू सों
जो बहुत धन॥ धृक जन्म अस अधम को सदा सबैदा
मलनमन॥ २५॥ दोहा॥ नट भट बिट गायक तहां
नहीं बारिन के भार॥ कौन भांति न्रप हम मिलै तस
भी हो हम नाहि॥ २६॥ ऐसे हू जग मे भये मुंडमाल
शिब कीन॥ धीन लीनी नर नवन लगि तुम को मद ज्वर
लीन॥ २७॥ भीख असन और द्रुग बसन फलभोजन
तरु धाम॥ अब मेरे इन न्रपन रह्यौ ना कोई काम॥

छप्पै

तुम अब नी के ईस ईस हम लो बानी के॥ तुम हो रनमे
रन मे धीर बीर गाढे अति जी के॥ त्याही विद्या बाद
करत हम हू नहिं हारे॥ अत पछि को मन मार आप
ना बिसारे॥ धन लोभी नर सबै तुम्हें हम को सिख
सोता॥ भलो तुमको न हमारी चाह तो हम हू यहां से
उठि चलें॥ २८॥ जबही समझौ नेक तबही सर्वज्ञ
भयो है॥ जैसे गज मद मत्त अधता छांड गयो है॥
तब सत संगत पाय कछुक हू समझन लाग्यो॥ त
बही भयो है मूंढ नाम गुन को सब भाग्यो॥ ज्वर च
ढता अति ता पूजो उतरत सीतल होत तन॥ त्योंही
जन को मद उतर लियो शील संतोष मन॥ ३०॥

तू होरी भजत क्यों नहीं कहा रिझावत और ॥ गोरे ही मन नन्द तें चिंतामन सब ठौर ॥ ३२ ॥

कुंडलिया

जैसे चंचल चंचला त्योंही चंचल भोग ॥ तैसे ही मद पाप है ज्यों घन पवन प्रयोग ॥ ज्यों घन पवन प्रयोग तरल सोही जवान तन ॥ छिन छिन लगत बार गनि हू जात औसकन ॥ देख्यो दुसह दुःख देह धारन के ऐसे ॥ साधत संत समाधि व्याधि सों छूटत जैसे ॥ ३३ ॥ पंकज पत्र पर चंचल हुरि जात ॥ त्योंही चंचल मानहू तजि जैहै निज गात ॥ तजि जैहै निज गात बात यह मोको जानत ॥ तौऊ छांड़ि विवेक नृपन की सेवा ठानत ॥ निज गुन करत बखान निर्लज्जता उचरी ऐसे ॥ भूलि गयौ निज ग्यान मूढ़ संसारी तैसे ॥ ३४ ॥

नृपति सैन संपति सचिव सुत कलित परिवार ॥ करत सबन कों स्वप्न सम नभौ काल करतार ॥

छप्पै

जो जन में हम संग सुतो सब स्वर्ग सिधारे ॥ जो खेले हम लार काल तिनहू कूं मारे ॥ हम हूं जर जर देह निकट ही दीसत मरबो ॥ जैसे सरता तीर वृक्ष को तुरत उखरिबो ॥ अजहू न छांड़त मन उमगि उर भौ रहोल ॥ ऐसे अचेत के संग में नाथ जगत को दुख सहत ॥ ३६ ॥ सर्प सुमन कौ हार उग्र बैरी उग बैरी और साजन ॥ कंचन मणि और लोह कसम ज्यों अह पाहन ॥ ऐसी तरुणी नारि-

दोहा

ब्रम्ह ध्यान धरि गंगा तट बैठो गौतम जि संग ॥ कब
हु वह दिन होयगो हिरन खुजावत अंग ॥ ३० ॥
जग के सुख सों दुखित है अरहै ढरहै नैन ॥ कब र
टि हों तट गंग के शिव शिव आरत बैन ॥ ३६ ॥
ईश शीश तजि स्वर्ग तजि गिरवर तज उतंग ॥ अ
वनी तजि जलदहि मिली परद सों पर सुरगंग ॥ ४८

छप्पै

नदी रूप यह आस मनोरम पूरि रह्यो जल ॥ तृष्णा त
रल तरंग राग है ग्राह महा बल ॥ नाना तिनके बि
हंग संग तरु तोरत ॥ भूमर ध्यानक मोह सबन को
गहि गहि बोरत ॥ नित बहुत रहत चित भूमें बि
ना तट अतिही बिकट ॥ कढि गये पार जोगी पुरु
ष जिन पायौ सुख तट निकट ॥ ४१ ॥

दोहा

ऐसो या संसार में सुन्यो न देख्यो धीर ॥
बिषीया हथनी संग लग्यो मन गज बांधे धीर ॥

कुंडलिया ॥ छोटे दिन लागत तिन्हें जिनके बहु बि
ध भोग ॥ बीत जात बिलसत रहत करत सुरत
संजोग ॥ करत सुरन से जोगतनक से जिन को
लागत जै है ॥ सब गदान तिन्है दीरग है दागन ॥ ह
म बैरी अंग अंग याही ते मोटे ॥ सदा एक रस योसू
लागत हैं बड़े न छोटे ॥ विद्या रहत कलंक ताहि चित में
नहिं धारी ॥ धन उपजायो नाहि सदा संगी सुखकारी ॥
मात पिता की सेव सुश्रुत पानेक न कीनी ॥ स्त्री नैनी

नव नारि अंकभरि कबहु नलीनी ॥ योंही बितीत कीनो समय ॥ ताकत डोल्यौ काकज्यों ॥ हे भज्यौ टेक पर हात तैं चंच चोर चालाक ज्यों ॥ ४४ ॥ बीतगये सर्व बखत तरुणा करुणा छाई हिय ॥ बिना सार संसार अंत परीणाम जान जिय ॥ अति पवित्र और पथ सरद के चन्द्र सहृत निस ॥ कोर हां तहां बिती त प्रीतिसों हर्षि रसों दिस ॥ सब बिष त्याग बैराग धारि गंगाधर हर र कहत ॥ ४५ ॥

छप्पै

तुम धन सों संतुष्ट तुष्ट हम छक्क बकलतें ॥ दोउ भये समान नैन मुख अंग सकलतें ॥ जान्यौं जात दरिद्र बहुत तृस्ना है जिनकें ॥ जिनके तृस्ना नाहि बहुत संपति है तिनकें ॥ तुमहीं बिचार देखौ हगन को निरधन धनवंत ॥ गुन पाय को कौ अंत अरु संत को ॥ ४६ ॥ दोहा ॥

सत संगत पुछना बिना कृपणता स्वच्छ ॥ कहा जानों किह तप कियौ यह फल होत प्रतिच्छ ॥ ४७ ॥

छप्पै

भोजन को करि पत्र दसों दिसा बसन बनाये ॥ भये भीख को सैन पलंग पृथी परछाये ॥ छांड़ि सबन को संग अकेले रहत रैन दिस ॥ निज आत्मा सों लीन धीन संतोष छिन छिन ॥ सन्याउ धन किये कर्म निर्मूल जिन ॥ ४८ ॥ दोहा ॥ नृप सेवा में तुच्छ फल बुरीकाल की व्याधि ॥ अपनी हित चाहत कियौ तू तो तप आराध ॥ ४९ ॥ सोरठा ॥ विभव के घर जाय आव मांगिवो है

भलौ॥ बंधुन के सिरताज भोजन हू करिवो बुरो ॥५०॥

छप्पै

अगाद करत दुखदोष बिषभरे बिषय भोग सुख॥ इन सौं परसौं परसुखै ही सबही मनमुख॥ ऐरे चित्तच लाक चाल तेरे तू तजिरे॥ बैठि ज्ञान की गोख सुम ति पटरानी सजिरे॥ छिन संगजात की वोर तू जित्तट र कौबे मोहि अब॥ संतोष सत्य अभ्यास हित सम दम साधन सब॥५५॥ दोहा॥ बकल बसन फल असन करि हौ बन बिस्राम॥ जित अबिबेकी नरन कौं सुनियत नाहीं नाम॥ ५६०॥

छप्पै

मोह छांड़ि मन मीत प्रीति सौं चन्द्रचूड़ भजि॥ सुरस रिता के तीर धीर धरि दृढ़ आसन साजि॥ सम दम जोग बिरोग त्यागन को तू अनुसारे॥ कथा बकै बक बाद स्वाद सबही तू परिहरि॥ थिर नहीं तरंग बुंद बुंद सदृश हूं जात है॥ सुख कहौ कहा इन नरन कूं जासों फूलत गात है॥ ५७॥ छहों रागनी राग सुनी गावति हैं निस दिन॥ कबिजन पढ़त कबि त छन्द छप्पै छिनहीछिन॥ लिये दुहुधा वोर करत ढारी सब नारी॥ इहन कमन कधनि होत लगत कानन को प्यारी॥ जो मिलै तोहि यह साज तो तू करि संसार रति॥ नाहिं मिलै इतहू ताहि सो साधत क्यों न समाधि गति॥ ५८॥

छप्पै

महलमहारमनीक कहा बसिबे नाहिं लायक॥ ना

हित सुनवे जोग कही ॥ गावत गायक नाहिन सुन वे जोग कहा जो गावत गायक॥ नव तरुनी को संग कहा सुख उनहिं न लागत ॥ को काहे को छांड़ि छांड़ि यह बन को भाजत ॥ इन जान लियो जगत कों जैसे दीपक पवन में ॥ लगि बात तुरत बुझ जात है थिर रहत नहीं निज भवन में॥६०॥ दोहा ॥

भये नाहिं सबही अलय कंद मूल फल फूल ॥ कुरंगनैनी ते लक्षन की सेवा करत कबूल ॥ ६१॥ गंगा तट गिर नर गुहा वहां कहा नहिं ठौर ॥ कुरागते अपमान सों खात पराये कौर ॥ ६२॥

एका की इच्छा रहत पाणी पात्र दिग वस्त्र ॥ शिव २ ।कहिबो होउगो कर्म शत्रु को शस्त्र ॥ ६४ ॥ इन्द्र भये धनपति भये भये शत्रु के साल ॥ कल्प जिये तोऊ गये अंत कालके गाल ॥ ६५ ॥ मन बिरक्त हर भक्त ज्रुति स गौवन त्टण डाभ ॥ यहि तें कछु और है परम अर्थ को लाभ ॥ ६६॥ ब्रह्म अखंडा बदय सुमरत क्यों न निसंक ॥ जाके छिन संसर्ग ते लगत लोकपति रंग॥ ६७॥

कुंडलिया

फांद्यो तें आकाश पे कोसो तु पाताल॥ दसों दिसा लू फिरो ऐसी चंचल चाल ॥ ऐसी चंचल चाल इते कब हूं नहिं आयो ॥ बुद्धि सदन कों पाय ज्ञान छिनहूं न छिवायो ।। देख्या नहीं निज रूप कूप अम्टत को छायो ॥ ऐरे मन मत मूढ़ क्यों न भवसागर फांद्यो ॥ ६८ ॥ वेही निस वेही दिवस वेही तिथि वह वार ॥ वेही उसम वही क्रिया वह ही विषय बिकार॥ वेही बिषय

बिकार सुनत देखत और सूंघत ॥ वेही भोजन भोग जाग सोवत अरु ऊंघत ॥ महा निलज यह जीव मोह में भयो बिदेही ॥ अजहू आवत नाहिं कढ़त गुनबेके थेही ॥ ६९ ॥ प्रथ्वी परम पुनीत पलगना को मनमानो ॥ तकिया अपनो हाथ गगन को तम्बू तानो ॥ सहित चन्द चिराक बिजुवा करन दसों दिस ॥ बनिता अपनी वृति संग हार हित दिवस निस ॥ अतुलित अपार संपति सहत सोहत हैं सबमें मगन ॥ मुनिराज महा न्टप राज ज्यों पौढ़े क्षमदेखे दगन ॥ ७० ॥

सोरठा

कहा बिषय को भोग पर भोग इक और है ॥ ताके होत संजोग नीरस लागत ॥ ७१ ॥ छप्पै ॥

साधे सब शुभ कर्म स्वर्ग को बास लह्यो तिन ॥ करत तहांहू चाल काल को व्याल भयंकर ॥ ब्रह्मा और सुरेश सबन को जन्म मरणडर ॥ यह बनक क्षति देखी सकल अति नहीं कछु कामकी ॥ ७३ ॥ जलकी तरल तरंग जात त्योंही जातु आयु यह ॥ जोबन हों दिन चार चटक की चोंप कांच यह ॥ ज्यौं दामिन पर संगभोग सब जानहु तैसे ॥ तैसही यह देह अथिर है है जैसे ॥ सुनिरे मेरे चित्त तू होय ब्रह्ममें लीन अब ॥ संतोष सत्य श्रद्धा सहित समदम साधन साध सब ॥ ७४ ॥ ज्यों सफरी को फिरत लखि सागर करत न छोभ ॥ अंडस बूह मंड को त्यों संतन के लोभ ॥ ७५ ॥ मनुस्म्टति और पुराण पढ़ो बिस्तार सहित जिन ॥ कहा अर्थज नहीं भयो तब तियदेखी सबठौर ॥ अबिबेकी अंजन

कियो लख्यो अलख सिर मोर ॥ ७६ ॥

छप्पै

चंद चांदनी रम्य रम्य बन मति पहुप जुत ॥ त्योंही अति रमनीक मित्र को मिलिबो अद्भुत ॥ बनिता के म्रदु बोल महा रमनीक बिराजत ॥ मान नी सुख रमनीक दृगन अंसुवन झर सावित ॥ इक यह परम रमनीक अति सब कोऊ चित से चहत ॥ इनको बिनास जब देखियत तब इन में कोऊ न रहत ॥ ७७ ॥

दोहा

उंछे व्रुति गतिमान सम हथी इच्छा रहि ॥ करन तपस्वी ध्यान कथा को आसन कीये ॥ ७८ ॥ अरी मेदनी मात तात मारुत सुन सेरे ॥ तेज सखा जल भ्राता व्योम बंधजु सनि मेरे ॥ तुम को करत प्रनाम हात तुम आगे जोरत ॥ तुम हमरे हौ मित्र शत्रुन को सिंधु कामरत ॥ अज्ञान जान तब मोह हू मिटियो तिहारे संगते ॥ आनन्द अखंडा नंद का छाय रहो रस रंगते ॥ ७९ ॥

जोलों देह निरोग जोलों निजराठन ॥ अरु तोलों बलवान आपु उरई मिनके गन ॥ तोलो निज कलान करस कोजतन बिचारत ॥ वह पंडित बहु धीर बीर ज्यों प्रथम समारथ ॥ फिर होत कहा जर जर भये जपतपसंजमनहिं बनत ॥ भाभ काय उठायो निज भवन में तबक्यों कर कूपहि खिनत ॥ ८० ॥

दोहा

विद्या पढी नरपद लह्यो लह्यो ननारि समीह ॥ यह जोबन योंही गयो ज्यों सून्य गरह को दीय ॥

(छप्पै)

मनके मनही मांथ मनोरथ वृद्ध भये सब ॥ निज अंगन में आस भयो जब जीवन हो अब ॥ विद्या की गई ब्याज नूर चौर नाहिं दीसत ॥ दौरे आवत काल कोप कर दस नन पीसत ॥ कबहू न पूजे प्रीति सों चक्र पानि प्रभु के चरण ॥ भव बंधन काटे कौन अजहों गहरे हरि सरन ॥ ८३ ॥

नर सेवा तजि ब्रह्म भज गुरु चरनन चितलाय ॥ कब गंगा तट ध्यान धरि पूजों गो शिव पाय ॥ ८४ ॥ पंकज नयनी शशि मुखी सब कवि कहत पुकारि ॥ नाको हम ऐसे कहत हाड़ मांस मय नार ॥ ८५ ॥

छप्पै

अरे काम बेकाम धनुष टंकार करत जत ॥ तूह कोकिल व्यर्थ वृथा काहे को गुञ्जत ॥ तैसेही तू नारि वृथा ही करत कुटाछै ॥ मोहिन उपजत मोह छोह सब रहिगो याछै ॥ चित्त चन्द्रचूड़ के ध्यान को ज्ञान अमृत बरसतइत ॥ आनन्द अखंडा नंद सों ताहि जगत सों क्यों कहत ८६ ॥ कथा और कोपीन महाजर जर है जिनके ॥ बैरी मित्र समान संकहू नाहिन तिनके ॥ बन समान बैठास भीख मांगे तब खावे ॥ सदा ब्रह्म में लीन पीन संतोष हि पावे ॥ यह भांति रहत धुन ध्यान में ज्ञान भान उनके उदित ॥ नित रहत अकेले एक रस वह जोगी जग में मुदित ॥ ८७ ॥ अति चंचल यह भोग जगत हू चंचल तैसा ॥ तू क्यों भटकत जीव मूढ़ संसारी तैसा ॥ आस फासी काट चित्त तू निर्मल कै है ॥ साधन साध समाध परम निज पद को छैहै ॥ करिके प्रीति मेरे बचनहारे

रे तू इह बारे को ॥ छिन इहै पहै दिन ही भलो जिन राख्यो कछुरो भोर को ॥ ८८॥ जोगी जग बिलराय जाय गिर गुहा बसत है ॥ करत ज्योति को ध्यान भेस आसा नरसत है ॥ बग कुल बैठत अंक पियत निरस कन पन जल ॥ धनि धनि यह धीर धरो जिन यह समाधि बल॥ हम सेवत सारो बाग सरि सरिता बापी कूप तट ॥ खोवत है योंही आप को भय निपट ही निधर घट ॥ ८९॥ भयो जन्म को भिन्न भरा जीवन को नास्यो ॥ नासिब का संतोष लाभ यह अघट प्रकास्यौ ॥ तैसे ही सम दृष्टि गनसति बनिता बिलास बर ॥ मच्छर गुण नास लेत नसत बन को भुजंगवर ॥ नृप भटसत किये इन दुरजनन की सो चपला चल नासति ॥ कछु इन देख्या बिना घट सत याहीतें चित अनन्द सत ॥ ९०॥

दोहा

रोग बियोग बिपति बह देह आप आधीन ॥ निडरबिधाता जग रच्यो महा अथिरता लीन ॥ ९१॥
सयो गर्भ दुख जन्म दुख जोबन तिया बियोग ॥ वृद्ध भये सबहन तजो जगत किधौं यह रोग ॥ ९२॥

(छप्पै)

सौ बर्षन की आयु रैन में बीतत आधी ॥ ताके आधी आध वृद्ध बाला पन साधी ॥ रहै यहै दिन आदि व्याधि दहे काजसमोये ॥ जल की तरंग बूंद बूंद सह स देह येह ह्वै जात है ॥ सुख कहो कहा इन नरन कूं जासो फूलत गात है ॥ ९३॥

(दोहा)

बड़े बिबेकी तजत हैं संपति पितु अरु मात
कैथा और कोपीन हू हम सों तजी न जात ४६

दोहा

कुपति सिंधनी ज्यों जरा कुपति शत्रु ज्यों रोग ॥ फूटे घट जल ज्यों जगत तऊ अहित जुत लोग ॥ ६५ ॥
पढ़ि बिद्या दृढ़ होत जब सबही भांति सुछन्द ॥ तबही नर को तन हरत बड़ो बिधाता मंद ॥ ६६ ॥

छप्पै

हे हू कछुक धनि धरी जिन धरत पीठ पर ॥ दूजो ध्रुव वह धल सरिस सिर राखत परिकर ॥ वृथा जगत में जन्म जीव निज स्वारथ साचे ॥ परमारथ के काज होत ऊंचे नहिं नीचे ॥ यह जानत नांहि हित कर मचेंम पेट हि भरत ॥ गूलर फल से ब्रह्म मंड में मछर से उपजत मरत ॥ ६७ ॥ छिन में बालक होत होत छिन ही में निरधन ॥ होत छिनक में वृद्धि देह जर जरता पावत ॥ नट ज्यों पलटत अंग स्वर्ग नित नयो दिखावत ॥ यह जीव नाच नाना मचत निचलो रहत न एक दम ॥ करि के कनात संसार की कौतुक निरखत रहत जम ॥ ६८ ॥
बहुत बहुत भोग को संग तहां त्यों इन रोगन को डर ॥ धन हु को डर भूप अगिन अरु त्यों होत संकर ॥ सेवा में भय स्वामि समर में सत्रुन को भय ॥ कुल हु में भय नारि देह को काल करत छय ॥ अभिमान डरत अपमान सों गुन गन डरपत सुन खल सबद ॥ सब गिरत परत भय सों भरे अभय एक बैराग्य पद ॥ १०० ॥

(दोहा)

करी भरतरी शतक भाषा भली प्रताप ॥ नीत सिंहल रस गौरव में वीत राज्ञ प्रभु आप ॥ १०१॥

दोहा

श्रीराधा गोबिन्द के चरन शरन बिश्राम ॥ चन्द्रमहल चित चुहल में उदयपुर नगर मुकाम ॥ १०२॥

दोहा

सम्वत अष्टादस सतक शुभ बावना वर्ष ॥ भादों रूष्मा पंचमी रच्यौ ग्रंथ करि हर्ष ॥ १०३॥

इति श्री मन्महाराजाधिराज राजराजेन्द्र श्री
श्री सवाई प्रताप सिंह जी देव
विरचंत भरतरी सतक
भाषा
नीति
सिंगार बैराग्य मंजरी सम्पूरणम्

(दोहा)

तुलसी बिलम्ब न कीजिये भजि लीजे रघुबीर
तन तरकस सों जात हैं स्वांस सार से तीर

इति

हस्ताक्षर श्रीराम शर्मा गोपालपुरा निवासी

इश्तिहार

प्रगट हो कि हमारे यहां हर क़िस्म की हिन्दी उर्दू की किताबें मौजूद हैं और व्योपारियों को बहुत किफ़ायत से दीजाती हैं जिन साहबों को ज़रूरत हो एकबार मंगाकर देख लेवें ॥

विजैमुक्तावली	व्यंजन प्रकाश	रागचमन चारभाग
प्रेमसागर	ज्योतिषशार	इश्कसागर
इन्द्रजाल	रामायण	मुहूर्तचिन्तामन
ब्रजबिलास	आलखंड	शीघ्रबोध
बाग बहार उर्दू	आफ़त की पुड़िया	जवाफत की पुड़िया
दिलबहलावनी	चारों भाग नागरी	दो हिस्सा नागरी
बैताल पच्चीसी	सिंहासन बत्तीसी	कबीली भटियारी
सुआबहत्तरी	विद्यारथी	महाजनी शार
आलोपदेश	गणित प्रकाश	वेश्या नाटक
चौ: सस्सी पन्नू के	बीरबल नामा	बैद रतन
बैद्यक सार	नागरी ५ भाग	दिल लगन
नाडी प्रकाश	निघंट	बुलबुल हजारदा
चक्का केवली	तोता मैंना ७ भा०	स्वांग ८ भाग
गोपीचन्द	भरतरी	इन्द्र सभा
सभाबिलास	सत्यनारायण	विवाह पद्धति
प्रेमचोलारानी	नौटंकी	गुलबकावली

पता:- लाला बंसीधर कन्हैयालाल महेश्री
बुकसेलर · कसेरठ बाज़ार आगरा